वैदिक वाङ्मय में यज्ञ एवं पर्यावरण

Archana Tripathi

Department of Sanskrit, Banaras Hindu University, Varanasi-5

Abstract

The word Yajya has been originated from Yajya dhatu, its literally meaning hes worship of God. In the other way uebjueb hes upasana of divine natural power and devoting all lovable things to the God.

According to Matasya puran enchanting also of vedic mantra, providing part of poojan-samagri such a cereals, sent, ghee and the things and distribute geving requiring to Brahmin necessary item to Yajya.

In a very scientific and peculiar way we can say that Yajya is one of spiritual cerus in and Vedic process which gives us non-polluted environment, healthy and long lives life and sufficient in rainfall also.

In this way According to Rigveda Agni plays very important role, it make the specific spiritual ora about Yagman effects in both manner for well wishing about humanity and develop event of our inner soule also..

Yajay helps is purification of air and water in universe also. Vedic Mantra has specific enchanting vibrations which affects different organs of body even our intellectual power, concentration and thinking power also.

This Yajay is helpful in reducing 'Air pollution' and 'Sound solution'. They gives us healthy, wealthy, happy and prosperous life. It gives unlimited mutual peace and power also. Non-polluted environment is helpful in the pregnancy of woman and improved the ecology.

ॐअग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्यदेवमृत्विजं होतारं रत्नधातमम्।

अग्नि का स्वभाव है अपने सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक वस्तु को पवित्र कर देना। निश्चय ही उसके पुरोहित स्वरूप के संरक्षण में संचालित होने वाला यज्ञ भी पवित्र से पवित्रतम् है, और अपनी विद्यमानता से समस्त संसार, जो कि आज विभिन्न प्रदूषणों का शिकार है, को पवित्र करने में सक्षम है। वेदों एवं शास्त्रों में सर्वत्र ही यज्ञ की महिमा का प्रतिपादन हुआ है तथा उसे लोक कल्याण और परमेश्वर की प्राप्ति का एक मुख्य साधन बताया गया है-

"यज्ञेनयज्ञमयजन्त देवास्तानिधर्माणि प्रथमन्यासन। तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।[१]

'यज्' धातु से 'यज-याच-यत-विच्छ-प्रच्छ रक्षो नङ्'[२] इस पाणिनीय सूत्र से 'नङ्' प्रत्यय करने पर 'यज्ञ' शब्द बनता है। 'धातवः अनेकार्थाः' इस वैयाकरण सिद्धान्त के अनुसार कतिपय आचार्यों ने 'यज देवपूजा संगतिकरणदानेषु' के अनुसार 'यज' धातु का देवपूजा, संगतिकरण और दान इन तीन अर्थों में प्रयोग किया है। स्पष्ट है कि यज्ञ में देवपूजा होती है, देवतुल्य ऋषि महर्षियों का संगतिकरण होता है और दान भी होता है।

यज्ञ शब्द के अन्य व्युत्पत्तिजन्य अर्थों पर जब हम दृष्टिपात करते हैं तो पाते हैं कि (१) येन सदनुष्ठानेन इन्द्रप्रभृत्यो देवाः सुप्रसन्नाः सुवृष्टिं कुर्युस्तद् यज्ञपदाभिधेयम्। (२) येन सदनुष्ठानेन स्वर्गादिप्राप्तिः सुलभा स्यात् तद् यज्ञ पदाभिधेयम्। (३) येन सदनुष्ठानेन सम्पूर्णं विश्वं कल्याणं भजेत् तद् यज्ञपदाभिधेयम्। (४) येन सदनुष्ठानेन आध्यात्मिक-आधिदैविक-आधिभौतिक तापत्रयोन्मूलनं सुकरं स्यात् तद् यज्ञपदाभिधेयम्। (५) यागाङ्गसमूहस्य एकफलसाधनाय अपूर्ववान् कर्मविशेषो यागः। (६) मन्त्रैर्देवतामुद्दिश्य द्रव्यस्य दानं यागः।[३]

अर्थात् जिस सदनुष्ठान द्वारा इन्द्रादि देवगण प्रसन्न होकर सुवृष्टि प्रदान करें उसे यज्ञ कहते हैं। अर्थात् जिस सदनुष्ठान द्वारा स्वर्गादि की प्राप्ति सुलभ हो उसे यज्ञ कहते है। सदनुष्ठान द्वारा संसार का कल्याण हो उसे यज्ञ कहते है। अर्थात् जिस सदनुष्ठान द्वारा आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक विपत्तियाँ दूर हो, उसे यज्ञ कहते है अर्थात् यागाङ्ग समूह के एक फल साधनार्थ अपूर्व से युक्त कर्म विशेष को यज्ञ कहते है और वैदिक मन्त्रों के द्वारा देवताओं को उद्देश्य करके किये हुए द्रव्य के दान को यज्ञ कहते है।

Vijnana Bharati

स्पष्ट है कि उपर्युक्त व्युत्पत्तिजन्य अर्थ हमें यह तथ्य प्रदान करते हैं कि यज्ञ जहाँ मनुष्यों को आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख करके अमें सुप्त सद्भावों और ज्ञान पक्ष को जागृत करता है वहीं विज्ञान पक्ष की दृष्टि से मन्त्रों के उच्चारण के साथ आहुतियां देने से वातावरण शुद्धि, अन्तरिक्ष में श्रेष्ठ विचारों के संचरण जैसे अनेक दुर्लभ लाभ प्राप्त होते हैं, इस परिप्रेक्ष्य में ऋग्वेद का यह मन्त्रार्थ द्रष्टव्य है- "जब अग्नि में सुगन्धित पदार्थों का हवन होता है तभी वह यज्ञ वायु आदि पदार्थों को शुद्ध तथा शरीर औषधि आदि की रक्षा करके अनेक प्रकार के रसों को उत्पन्न करता है तथा उन यज्ञ द्वारा शुद्ध पदार्थों के भोग से प्राणियों का विद्या ज्ञान और उनके बल में वृद्धि होती है।"[४] यहीं कारण हैं कि वैदिक काल में महर्षियों ने 'पंचमहायज्ञ' को नित्ययज्ञ के रूप में प्रतिष्ठापित किया। यह पञ्च महायज्ञ विश्वकल्याणार्थ होता है क्योंकि इसका सम्बन्ध 'समष्टि' से होता है 'व्यष्टि' से नहीं।[५] इस प्रकार यज्ञ वैदिक संस्कृति का प्रधान अंग था जिसे 'विश्वकल्याणार्थ' इस धारणा के साथ अपनाया गया था। स्वार्थ के धरातल से उपर उठा यह भारतवर्ष उस समय जगदगुरु के नाम से जाना जाता था, जो अनेक प्राकार की सुख समृद्धियों से सम्पन्न था न कि आज की तरह अनेक प्राकृतिक आपदाओं से ग्रस्त था।

आज जब हम विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, अकाल मृत्यु, महामारी, प्रभृति रोग शोकादि से ग्रस्त हैं तब अनायास ही सुख-समृद्धि से सम्पन्न अपने पूर्वजों की ओर ध्यान आकृष्ट होता है और उन त्रिकालदर्शी ऋषि महर्षियों के द्वारा मनुष्य के और प्राणीमात्र के कल्याणार्थ निर्धारित दिनचर्या (यज्ञ प्रधान) का उल्लंघन ही अपनी विपत्तियों का कारण समझ में आता है। यज्ञ की महत्ता का प्रतिपादन ऋग्वेद की इस उक्ति से हो रही है कि "अग्निदेव हविर्द्रव्य के द्वारा देवताओं का सत्कार करते हैं, अतः सत्य सनातन स्वरूप यज्ञों को कोई भी दूषित करने में समर्थ नहीं हो सकता है"[६] अर्थात् हवि जो औषधियों से युक्त होती है के द्वारा समस्त प्राकृतिक तत्त्वों को तत्तत् तथ्य प्राप्त हो जाते हैं, जिस-जिसको जो आवश्यकता होती है, परिणामतः सन्तुलन बना रहता है, प्रदूषण का प्रकोप कैसे उत्पन्न हो सकता है? किन्तु आज यज्ञ के अभाव में पृथ्वी का प्रत्येक जीवधारी विभिन्न प्रदूषणों का शिकार है। ये प्रदूषण मुख्य रूप से हमें आक्रान्त किये हैं- वायु प्रदूषण के रूप में, जल प्रदूषण के रूप में और ध्वनि प्रदूषण के रूप में। प्राचीन काल में इन प्रदूषणों का निदान भी यज्ञ के द्वारा ही होता था। यद्यपि आज प्रदूषण की समस्या औद्योगिकरण के कारण अधिक गम्भीर है तथापि यह कहना कि प्राचीन काल में प्रदूषण था ही नहीं आधारहीन होगा क्योंकि मनुष्य के जन्म के साथ ही प्रदूषण भी जन्म लेता है। यह एक संशयहीन सत्य है। अतः ये सारे प्रदूषण प्राचीन काल में भी न्यूनाधिक मात्रा में विद्यमान थे, जिन्हें हमारे चिन्तनशील महर्षियों ने यज्ञों की नित्य परिपाटी के द्वारा संतुलित किया था। यज्ञ, जल और वायु को प्रदूषित न होने देने में सहायक है। वायु और जल की पवित्रता निश्चय ही मनुष्यों को विभिन्न संक्रामक रोगों से बचाने वाला है इसमें सन्देह नहीं है। उदाहरणस्वरूप इस तथ्य को हम ऐसे हृदयंगम कर सकते है - यह एक वैज्ञानिक तथ्य है कि कोई भी वस्तु जलाने पर नष्ट नहीं होती अपितु वायुभूत होकर आकाश में तथा वातावरण में फैल जाती है उदाहरण के लिए यदि हम लाल मिर्च जलाते हैं तो वह वायु में मिलकर दूर-दूर तक फैल जाती है जिसकी प्रातिक्रिया हम खाँसी एवं छिंकों के द्वारा करते हैं। यहाँ हम समझ सकते हैं कि इसी आधार पर यज्ञ में हवन की गई औषधियाँ तथा घृत आदि पौष्टिक वस्तुएँ वायुभूत आकाश में अनेकगुनी शक्तिशाली होकर फैलती है और यज्ञ की इस क्रिया-प्रतिक्रिया के द्वारा असंख्य लोगों को महत्वपूर्ण शारीरिक लाभ होता है। महामारियों और बीमारियों की सम्भावना नष्ट होती है और फैले हुए सामयिक रोग उनसे दूर होते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में शुक्ल यजुर्वेद का यह उदाहरण द्रष्टव्य है कि जिसमें "वायु और इन्द्र से प्रार्थना की गई है कि वे यज्ञ के दिनों में जल और वायु को दूषित न होने दें क्योंकि जल और वायु के दूषित होने से संक्रामक रोगों के होने की सम्भावना रहती है, जिससे मनुष्यों में बीमारी होने का विशेष भय रहता है।"[७] शुक्ल यजुर्वेद में यह तथ्य मिलता है कि "हव्य पदार्थ द्वारा मित्रावरुण की उपासना करने से संक्रामक रोग शान्त हो जाते हैं।"[८] अर्थात् यज्ञ में यह सामर्थ्य है कि उसकी विद्यमानता में जल और वायु के प्रदूषण की प्रक्रिया शान्त हो जाती है और स्वच्छ जल और वायु के प्रयोग में हमें विभिन्न प्रकार के रोगों से शान्ति मिलती है। इसी परिप्रेक्ष्य में ऋग्वेद के एक मन्त्र का भावार्थ कुछ इस प्रकार स्पष्ट किया गया है "विद्वान लोग अग्नि में जो घृत आदि पदार्थ डालते हैं वे अन्तरिक्ष को प्राप्त होकर वहाँ ठहरे हुए जल को शुद्ध करता है और वह शुद्ध हुआ जल सुगन्ध आदि गुणों से सब पदार्थों को आच्छादित करके सब प्राणियों को सुखयुक्त करता है" ये तथ्य हमें यह ज्ञापित करते है कि यज्ञ के द्वारा आज हम विभिन्न प्रदूषित आपदाओं और संक्रामक रोगों से मुक्त हो सकते हैं क्योंकि वर्तमान में वायु की प्रदूषणावस्था

Vijnana Bharati

में हम विभिन्न प्रकार के रोगों से ग्रस्त होते जा रहे है। वायु प्रदूषण का मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है इससे स्वास्थ्य सम्बन्धि बहुत से रोग होते जा रहे हैं, जिनमें फेफड़ों का कैंसर, दमा और फेफड़ों से सम्बन्धित दूसरे रोग सम्मिलित हैं, वायु में स्थित अनेक धातुओं के कण भी बहुत से रोग उत्पन्न करते हैं। सीसे के कण विशेष रूप से नाड़ीमण्डल सम्बन्धी रोग उत्पन्न करते हैं। कैडिमियम श्वसन विष का कार्य करता है, जो रक्त दाब बढ़ाकर हृदय सम्बन्धित बहुत से रोग उत्पन्न करता है। नाइट्रोजन आक्साइड से फेपड़ों, हृदय और आँखों के रोग हो जाते हैं। ओजोन नेत्र-रोग, खाँसी एवं सीने का दर्द उत्पन्न करती है। इसी प्रकार प्रदूषित वायु एग्जीमा तथा मुहांसे आदि अनेक रोग उत्पन्न करती है।

यदि हम जल प्रदूषण के दुष्परिणामों का अध्ययन करते हैं तो पाते हैं कि केन्द्रीय जल स्वास्थ्य इंजीनियरिंग अनुसन्धान संस्थान के अनुसार भारत में प्रति १,००,००० व्यक्तियों में से ३६० व्यक्तियों की मृत्यु आन्त्रशोध (टायफायट, पेचिश आदि) से होती है, जिसका कारण अशुद्ध जल है।

यज्ञ के द्वारा न केवल उपर्युक्त बीमारियों से मुक्त हुआ जा सकता है अपितु बंध्यापन के विभिन्न प्रकार जिसका उल्लेख 'चरकसंहिता'[९] में है से भी "यज्ञप्रक्रिया द्वारा मुक्ति मिल सकती है। यह ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान में किये गये अब तक के अनुसन्धानों से सिद्ध हो चुका है।"[१०] यज्ञ द्वारा सन्तान प्राप्ति की यह प्रक्रिया ऋग्वेद में इस प्रकार है-

"यज्ञ की अग्नि हविर्द्रव्य प्रदान करने वाले को अत्यन्त यशस्वी, ज्ञानी, विजयी और श्रेष्ठ वाग्मी बनाती है और सर्वगुण सम्पन्न पुत्र प्रदान करती है।"[११] इसी परिप्रेक्ष्य में यजुर्वेद में कहा गया है कि "इन यज्ञों के द्वारा उत्पन्न सन्तान शारीरिक व मानसिक स्थिर रूप से स्वस्थ्य होती है।[१२] इसके अतिरिक्त वैदिक साहित्य में प्रतिपादित पुत्रेष्टि यज्ञ सन्तान की प्राप्ति के लिए ही किया जाता है, अतः यज्ञ से पुत्र की प्राप्ति सर्वजन ज्ञापित तथ्य है।

आज जब रेडियोधर्मी प्रदूषणों और रासायनिक प्रदूषणों के द्वारा हम आहत हैं ऐसे में भी यज्ञ हमारे लिए उपयोगी है। आज की परिस्थिति यह है कि परमाणु शक्ति उत्पादन केन्द्रों और परमाणु परीक्षण के फलस्वरूप जल, वायु तथा पृथ्वी का प्रदूषण निरन्तर बढ़ता जा रहा है। यह प्रदूषण आज की पीढ़ी के लिए ही नहीं वरन् आने वाली पीढ़ियों के लिए भी हानिकारक सिद्ध होगा। विस्फोट के समय उत्पन्न रेडियोधर्मी पदार्थ वायुमण्डल की बाह्य परतों में प्रवेश कर जाते हैं। जहाँ पर वे ठण्डे होकर संघनित अवस्था में बूँदों का रूप ले लेते हैं, और बहुत छोटे-छोटे धूल के कणों के रूप में वायु के झोकों के साथ समस्त संसार में फैल जाते हैं जिसका उदाहरण द्वितीय महायुद्ध में नागासाकी तथा हिरोशिमा में हुए परमाणु बम के विस्फोट है। इस विस्फोट से बहुत से मनुष्य अपंग हो गए थे और भावी सन्तति भी अनेक प्रकार के रोगों से ग्रस्त हो गयी और होती जा रही है। इसी प्रकार यदि हम रासायनिक प्रदूषणों की बात करें जिसमें कृषक अधिक पैदावार के लिए कीटनाशक और रोगनाशक दवाओं तथा रसायनों का प्रयोग करते है तो वहाँ भी यज्ञ उपयोगी सिद्ध हो सकता है, क्योंकि ये रसायन जब यज्ञीय प्रक्रिया के परिणामस्वरूप हुए वर्षा के जल के साथ सम्मिश्रित होकर अपने कुप्रभावों से मुक्त हो जाते हैं, इससे समुद्री जीव जन्तुओं तथा वनस्पतियों पर इनका घातक कुप्रभाव उतना दिखाई नहीं पड़ता है जितना की पड़ सकता था।

रेडियोधर्मी प्रदूषण तथा रासायनिक प्रदूषण के परिप्रेक्ष्य में अथर्ववेद का यह मन्त्र द्रष्टव्य है कि जिसमें वायु के वेगों के द्वारा जल की स्वच्छता की बात की गयी है "हे चमकने वाले हृदय वाले वायु देवों! जब तुम वेग से चलते हो तब, जलों और औषधियों को रसवाली और हितकारिणी करते हो। हे नेता मरूतों! जहाँ मधुर जल सींचते हो, वहाँ बल देने वाला अन्न और उत्तम बुद्धि स्थापित करते हो"[१३] ऐसी अवस्था में हमें यज्ञ अवश्य करना चाहिए क्योंकि यह सर्वविद् और सिद्ध तथ्य है कि यज्ञ के द्वारा वर्षा होती है जो संक्रामक रोगों को दूर करने वाली होती है। शुक्ल यजुर्वेद में कहा गया है कि "हव्य प्रदान द्वारा मित्रावरुण की उपासना करने से संक्रामक रोग शान्त हो जाते हैं"[१४] अर्थात् जब हम यज्ञ करते हैं तो औषधियुक्त हवि के प्रभाव से वायु परिष्कृत होती है तत् पश्चात जल के सम्पर्क में आकर जल को भी पवित्र और विशुद्ध करता है। जिससे संक्रामक रोगों के विस्तार प्रदान करने वाले विषाणुओं का अस्तित्व नष्ट हो जाता है। स्वच्छ वायु और स्वच्छ जल के प्रभाव से होने वाली वर्षा हमारे लिए विविध प्रकार से उपयोगी होती है। "इन्द्र ऋषियों के द्वारा की गयी स्तुति में और मनुष्यों के द्वारा किये गये यज्ञों में जाते हैं"[१५] इन्द्र वर्षा के देवता है अतः स्पष्ट है कि यज्ञ के द्वारा वर्षा होती है जिससे हम विभिन्न प्रकार के प्रदूषण परिष्कारों के साथ अन्न की प्राप्ति भी करते हैं अर्थात् पेड़-पौधों की उत्पत्ति होती है और ये पेड़ पौधे ही हमारे प्राणधायक है क्योंकि पेड़-पौधे से जहाँ हमें आक्सीजन मिलती है, वायु प्रदूषण की समाप्ति होती है वहीं क्षुधा तृप्ति के लिए अन्न की प्राप्ति भी होती है। इस प्रश्न का अनुमोदन वेद से उत्तरवर्ती विभिन्न शास्त्रों ने किया है। श्रीमद् भागवत गीता के द्वारा

Vijnana Bharati

यह स्पष्ट प्रतिपादित है कि – "अन्नाद भवति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः। यज्ञाद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः।। अर्थात यज्ञ से वृष्टि और वृष्टि से अन्न, अन्न से (रेतस् और रेतस् से) प्राणी होते हैं"[१६] इस प्रकार महर्षि व्यास ने केवल वचन ही नहीं युक्ति या कार्य कारण भाव को भी प्रस्तुत किया है। इस तथ्य का अनुमोदन मनु ने इन शब्दों के द्वारा किया है। "अग्नि में डाली हुई आहुति सूर्यमण्डल को प्राप्त होती है। और अन्न से समस्त प्रजा जन्म तथा जीवन धारण करती है।" वेद गीता और मनुस्मृति के द्वारा प्रतिपादित याज्ञिक महत्व का यह अनुमोदन महाभारत,[१८] पद्मपुराण,[१९] विष्णुपुराण[२०] और कालिकापुराण[२१] में भी है।

उपर्युक्त समस्त याज्ञिक महत्ताओं का संग्रह आश्वलायन गृहसूत्र में भी है – "हे यज्ञाग्ने! तुम प्रज्ज्वलित होकर हमको प्रज्ज्वलित करो। तुम बढ़ो और हमको भी बढ़ाओं प्रजया अर्थात् सन्तान से पशुओं से, आत्मज्ञान से तथा अन्न से क्योंकि यज्ञ से इन चारों पदार्थों की प्राप्ति होती है।[२२]

'यज्ञ करना चाहिए' इसके लिए अनेक सार्थक परिणामों का उद्घाटन करने के पश्चात हम आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहेंगे याज्ञिक प्रक्रिया के दौरान होने वाले मन्त्रोच्चार पर। वेद मन्त्र.विशिष्ट शक्ति और सामर्थ्य भरी एक श्रृंखला के साथ विनिर्मित है, उसके उच्चारण में विशेष प्रकार की शक्तिशाली ध्वनि कम्पन निकलती हैं और जिस प्रयोजन के लिए जो मन्त्र बना है उसके अनुकूल वातावरण व्यापक क्षेत्र में बनता है, जो भी इस ध्वनि प्रवाह के सम्पर्क में आता है उस पर उसका गहरा प्रभाव पड़ता है। मन्त्रों का ऐसा प्रभाव निश्चय ही ध्वनि प्रदूषण की समस्या को समाप्त करने में भी सक्षम है। प्राचीन काल में ब्राह्मण अपने जीवन का बहुत समय अग्निहोत्रों के सानिध्य में बिताते थे, यज्ञ नित्य करते थे फलस्वरूप उनके शरीरों और मनों की स्थिति देवतुल्य बनी रहती थी। वर्तमान में यज्ञ की परम्पराओं को ब्राह्मण भी आगे बढ़ाने में आलस्य और प्रमादवश अक्षम हो गये हैं। जिसका दुष्परिणाम आज के ब्राह्मणवर्ग के सामने है। आज उनका वह तेज नहीं रहा जिसके समक्ष राजा भी नतमस्तक रहा करता था।"[२३]

उपर्युक्त समस्त विवेचनों को ध्यान में रखते हुए निष्कर्षतः हम यहीं कह सकते है कि हम भी वेदों के इन वक्तव्यों के साथ जिसमें कहा गया है कि "यज्ञ पुरूष परमेश्वर ने यज्ञ के द्वारा ही समस्त सृष्टि को, वेदों को, चन्द्रमा, सूर्य, वायु, पञ्चप्राण, अन्तरिक्ष, द्यूलोक, पृथ्वीलोक और दस दिशाओं को उत्पन्न करके सभी को स्वयं ही धारण किया है।"[२४] यज्ञ की महत्ता इसी से सिद्ध है कि यह वेद से भी प्राचीन है क्योंकि वेद की उत्पत्ति यज्ञ से हुई है, यज्ञ से उत्पन्न होने वाले वेदों में जो कुछ भी लिखा है वह सब यज्ञपरक ही है।"[२५] "यज्ञ सृष्टिचक्र में रहने वाले प्राणीवर्ग का जहाँ आधायक है, संरक्षक है वहीं आध्यात्मिकता का भी प्रकाशक है।"[२६] निश्चय ही इसकी आवश्यकता विज्ञान से भी बढ़कर है क्योंकि विज्ञान तो सिर्फ मनुष्य के इहलोक का साथी है तब तक, जब तक कि हम उसका उचित प्रयोग करें किन्तु यज्ञ इहलोक के साथ परलोक में भी साथ देता है। यही कारण है कि वेदों में एक लक्ष मन्त्रों में ८० हजार कर्मकाण्ड से सम्बन्धित है। इसप्रकार यज्ञ भाग से ही वेद महत्वपूर्ण है। जिस यज्ञ का गुणगान वेदों में इस प्रकार किया गया है, वह यज्ञ निश्चय ही सुखदायी और वैज्ञानिक है। ऐतरेय ब्राह्मण में ठीक ही लिखा है "यज्ञोऽपि तस्यै जनतायै कल्पते।"[२७]

सन्दर्भ :

१. ऋग्वेद- ९०/९०/१६, यजु० ३१/९
२. अष्टाध्यायी – ३/३/९०
३. वेणीराम शर्मा गौण – यज्ञमीमांसा
४. ऋग्वेद- १/१३/२
५. महर्षि अङ्गिरा – 'यज्ञमहायज्ञौ व्याष्टिसमाष्टि सम्बन्धात् ।'
६. ऋग्वेद- ३/३/१
७. शुक्ल यजुर्वेद – ३३/८६
८. शुक्ल यजुर्वेद – ३३/८७
९. चरक संहिता – शरीर स्थान – २/५
१०. अखण्डज्योति – जून २००३ – पृ० सं० ४०
११. ऋग्वेद – ५/२५/५
१२. यजुर्वेद – १/२३
१३. अथर्ववेद – काण्ड ६, सूक्त – २२
१४. शुक्ल यजुर्वेद – ३३/८७
१५. शुक्ल यजुर्वेद – उत्तरा० ३/३/२३
१६. गीतोपनिषद् – ३/१४
१७. मनुस्मृति – ३/७६
१८. महाभारत, शान्तिपर्व – २६३/११
१९. पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड – ३/१३२
२०. विष्णुपुराण – १/६/८
२१. कालिकापुराण – ३२/७-८
२२. आश्वलायनगृह्यसूत्र – १/८/१३
२३. मनुस्मृति – ६/३६
२४. शुक्ल यजुर्वेद – ३१/६, ७, ८, ११, १२, १३
२५. शुक्ल यजुर्वेद – ३१/६
२६. ऋग्वेद – २/३८/१ शुक्ल
२७. ऐतरेयब्राह्मण – १/२/३

Vijnana Bharati